मणिधारी दादा श्रीजिनचन्द्रसूरि

युगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरिजी के पट्टालंकार मणिधारी श्रीजिनचंद्रसूरिजी ने अपने असाधारण व्यक्तित्व एवं लोकोत्तर प्रभाव के कारण अल्पायु में ही जो प्रसिद्धि प्राप्त की वह सर्वविदित है। ये महान् प्रतिभाशाली एवं तत्त्ववेत्ता विद्वान आचार्य थे।

इनका जन्म संवत् ११६१ भाद्रपद शुक्ल ८ के दिन जेसलमेर के निकट विक्रमपुर नगर में हुआ। इनके पिता साह रासलजी एवं माता देल्हणदेवी थी। जन्म से ही ये अधिक सुन्दर थे, जिसके कारण सहज ही सर्वसाधारण के प्रिय हो गये।

संयोगवश विक्रमपुर में युगप्रधान आचार्य श्री जिनदत्तसूरिजी का चातुर्मास हुआ। चातुर्मास की अवधि में सूरिजी के अमृतमय उपदेशों को सुनने के लिये जहाँ नगरवासी भारी संख्या में जाते थे, वहाँ देल्हणदेवी भी प्रतिदिन प्रवचनामृत का पान करती हुई अपने जीवन को धन्य मानती थी। देल्हणदेवी के साथ उसके पुत्र (हमारे चरित्रनायक) भी रहते थे। एक दिन देल्हणदेवी के इस बालक के अन्तर्हित शुभ लक्षणों को देखकर आचार्य देव ने अपने ज्ञानबल से यह जान लिया कि "यह प्रतिभासम्पन्न बालक सर्वथा मेरे पट्ट के योग्य है। निस्सन्देह इसका प्रभाव लोकोत्तर होगा एवं निकट भविष्य में ही गच्छनायक का महत्त्वपूर्ण पद प्राप्त करेगा।" बालक संस्कारवान तो था ही, उसका मन इतनी कम आयु के होते हुए भी विरक्ति की ओर अग्रसर होने लगा। अन्ततः विक्रमपुर से विहार करने के पश्चात् अजमेर में सं० १२०३ फाल्गुन शुक्ल नवमी के दिन श्री पार्श्वनाथ विधिचैत्य में प्रतिभासम्पन्न इस बालक को आचार्यजी ने दीक्षित किया। दीक्षा के समय इस बालक की आयु मात्र ६ वर्ष की थी।

दीक्षित होने के पश्चात् दो वर्ष की अवधि में ही किये गये विद्याध्ययन से आपकी प्रतिभा चमक उठी। फलतः आपकी असाधारण मेधा, प्रभावशाली मुद्रा एवं आकर्षक व्यक्तित्व से प्रभावित होकर दीक्षित होने के दो वर्ष पश्चात् ही संवत् १२०५ में वैशाख शुक्ल ६ के दिन विक्रमपुर के श्री महावीर जिनालय में युगप्रधान आचार्य श्रीजिनदत्तसूरिजी ने आपको आचार्य पद प्रदान कर श्री जिनचन्द्रसूरि जी के नाम से प्रसिद्ध किया। आचार्य पद का यह महामहोत्सव इनके पिता साह रासलजी ने ही भव्य समारोह के साथ किया था।

युगप्रधान गुरुदेव दादा श्रीजिनदत्तसूरिजी ने अपने विनयी शिष्य श्रीजिनचन्द्रसूरि को शास्त्रज्ञान आदि के साथ ही गच्छ संचालन आदि की भी कई शिक्षाएँ दीं। आपने इनको विशेष रूप से यह भी कहा था कि "योगिनीपुर दिल्ली में कभी मत जाना।" क्योंकि आचार्यदेव यह जानते थे कि वहां जाने पर श्रीजिनचन्द्रसूरि को अल्पायु योग है।

संवत् १२११ में आषाढ़ शुक्ल ११ को अजमेर में श्री जिनदत्तसूरिजी का स्वर्गवास हो गया तब अल्पायु में ही सारे गच्छ का भार आप के ऊपर आ गया एवं अपने गुरुदेव के समान आप भी कुशलतापूर्वक सफलता के साथ इस गुरुतर भार को वहन करने में लग गये।

गच्छ-भार को वहन करते हुए आपने विविध ग्रामों एवं नगरों में विहार कर धर्म प्रचार करना प्रारंभ किया। फलस्वरूप आप के उपदेशों से प्रभावित होकर कई श्रावकों एवं श्राविकाओं ने दीक्षाएँ ग्रहण कीं।

आचार्यदेव धर्मशास्त्रों के अतिरिक्त ज्योतिष शास्त्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

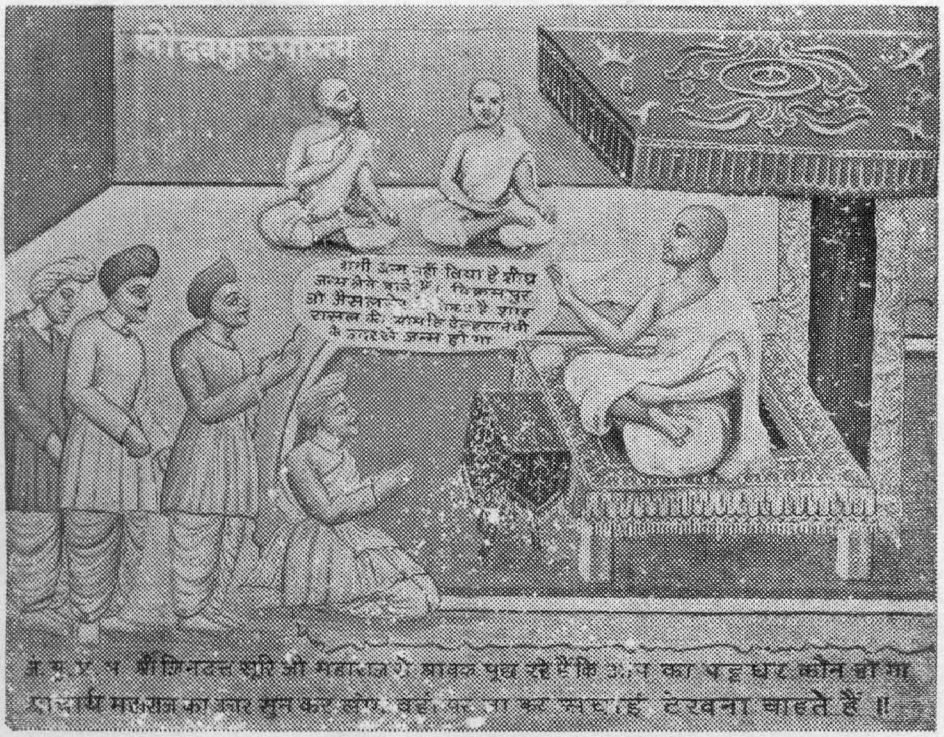

भावी पट्टधर सम्बन्धी श्री जिनदत्तसूरिजी से पृच्छा

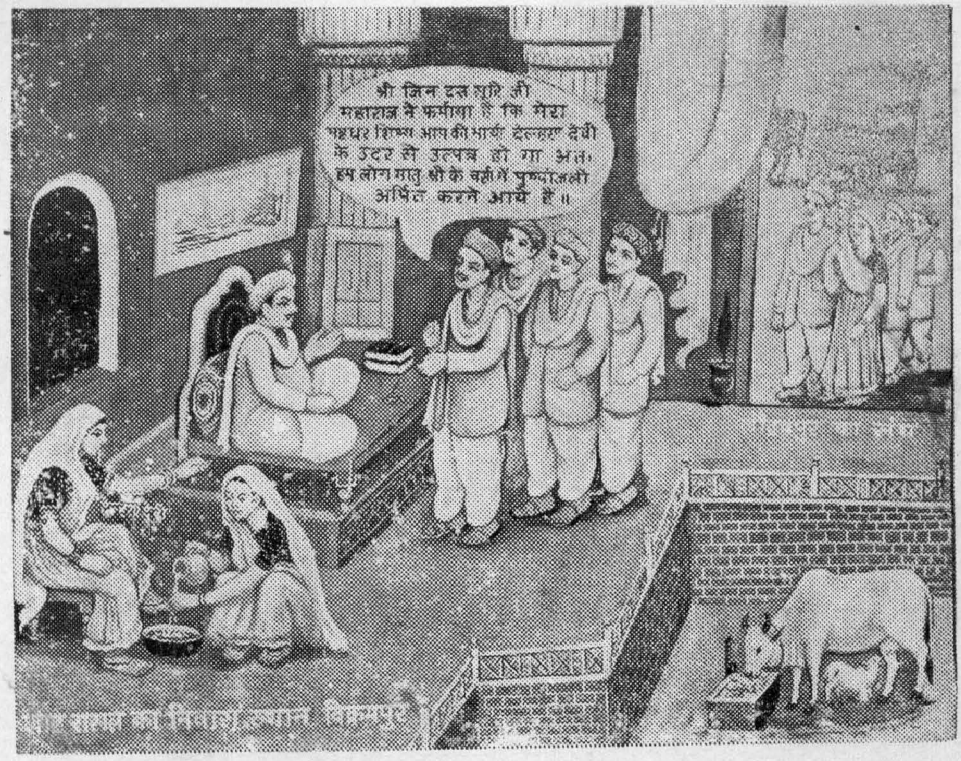

माता देल्हणदेवी और गर्भस्थ मणिधारीजी को वंदनार्थ रामदेव का विक्रमपुर आगमन (सं० ११९७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

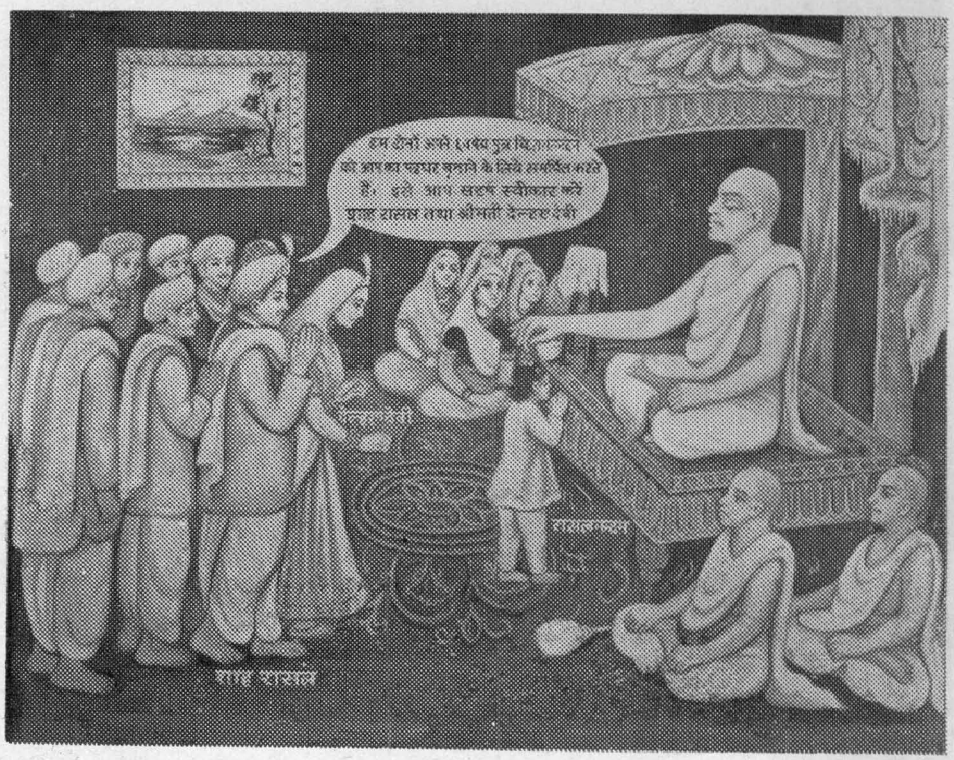

रासल श्रेष्ठी द्वारा मणिधारीजी को श्री जिनदत्तसूरि के चरणों में समर्पण

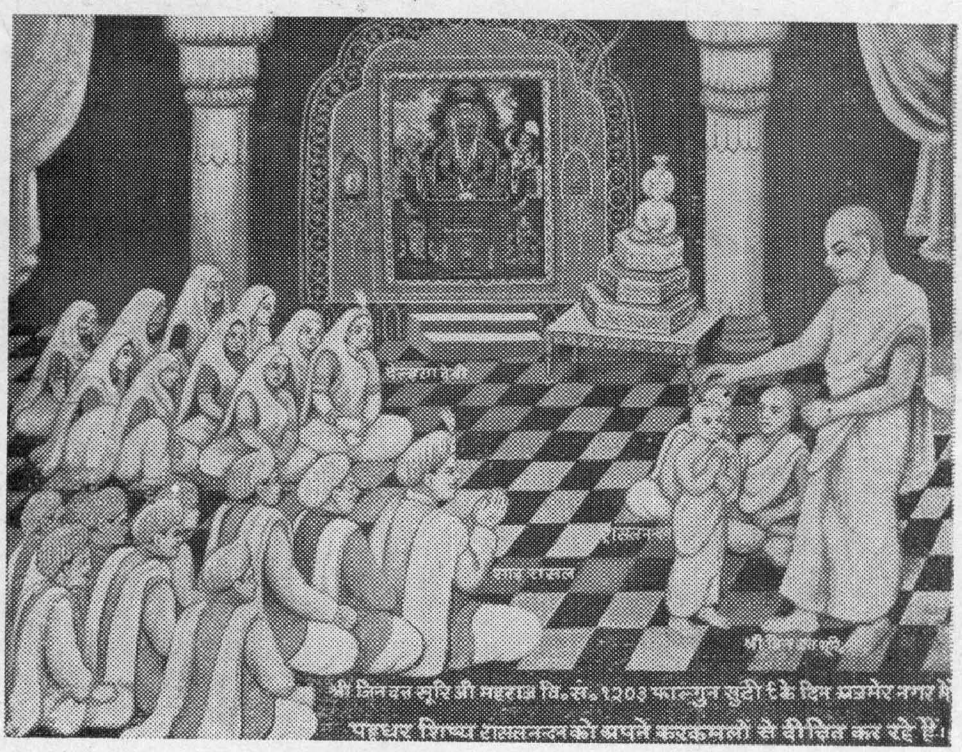

सं० १२०३ फाल्गुन शुक्ला ६ के दिन अजमेर में श्री जिनदत्तसूरिजी
द्वारा मणिधारी जी को दीक्षित करना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

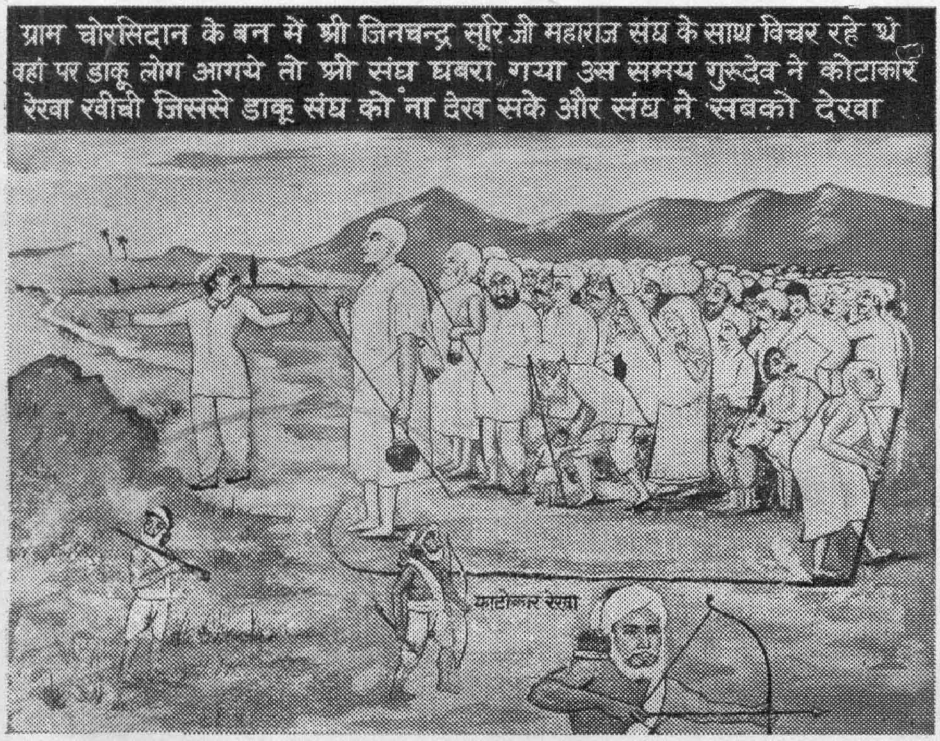

चोरसिदान के मार्ग में मणिधारीजी द्वारा मलेच्छों से संघ की रक्षा

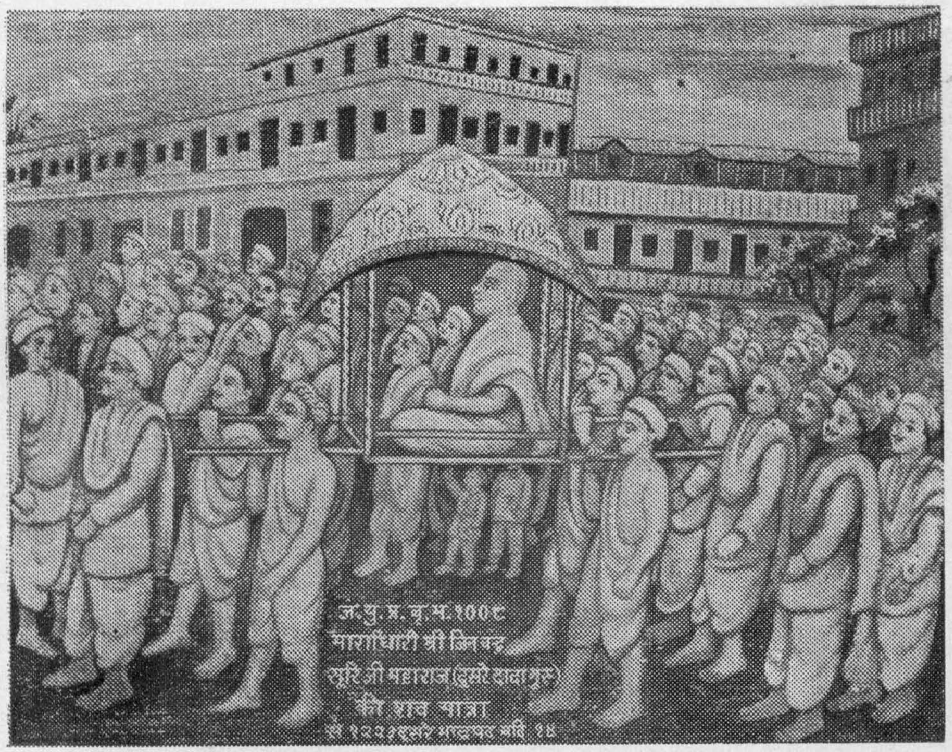

निर्यान विमान में मणिधारी जी का अन्तिम दर्शन
दिल्ली में स्वर्गवास सं० १२२३ द्वितीय भाद्र कृष्ण १४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि—

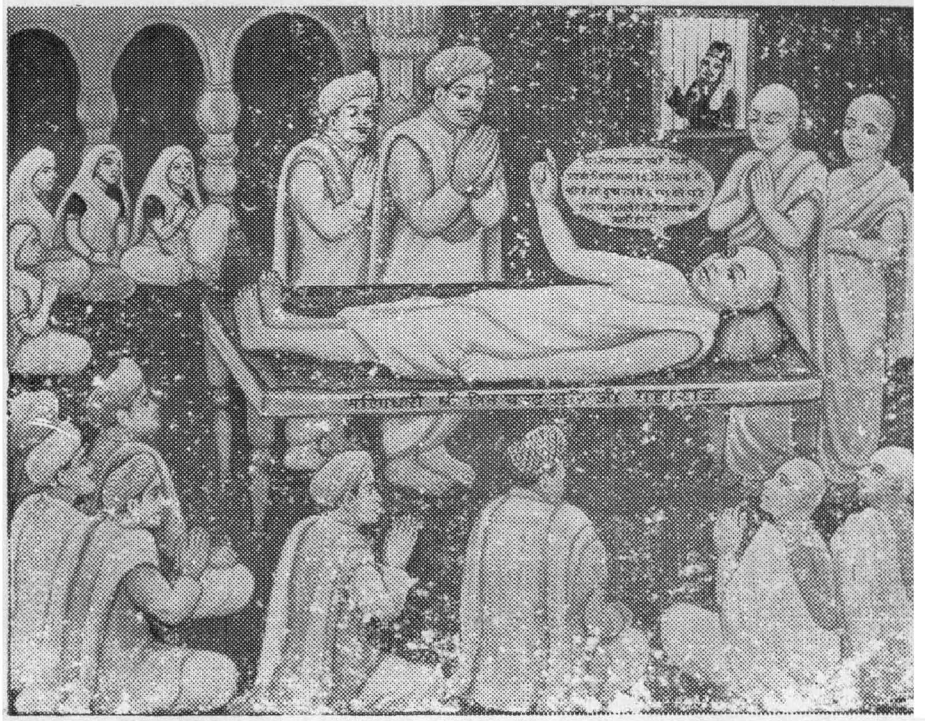

मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरिजी के अन्तिम ~~दर्शन~~ आराधना व शिक्षा दृश्य

मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि की अन्तिम आराधना व शिक्षा दृश्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के भी पारंगत विद्वान थे। इसके साथ ही आपने कई चमत्कारपूर्ण सिद्धियाँ भी प्राप्त की थीं।

एक बार संघ के साथ विहार कर जब दिल्ली की ओर पधार रहे थे तो मार्ग में चोरसिदान ग्राम के समीप संघ ने अपना पड़ाव डाला। उसी समय संघ को यह मालूम हुआ कि कुछ लुटेरे उपद्रव करते हुए इधर ही आ रहे हैं। इस समाचार से सभी भयभीत हो घबराने लगे। इस प्रकार संघ को भयातुर देखकर सूरिजी ने कारण पूछा कि आप भयभीत क्यों हैं? किस कारण से घबरा रहे हैं? जब आचार्यदेव को यह ज्ञात हुआ कि ये म्लेच्छोपद्रव से व्याकुल हैं, तो उन्होंने तत्काल ही कहा—"आप सब निश्चिन्त रहें, किसी का कुछ भी अहित होने वाला नहीं है। प्रभु श्री जिनदत्तसूरिजी सब की रक्षा करेंगे।"

इसके पश्चात् आपने मन्त्रध्यान कर अपने दण्ड से संघ के चारों ओर कोट के आकार की रेखा खींच दी। इसका प्रभाव यह हुआ कि संघ के पास से जाते हुए उन म्लेच्छों (लुटेरों) को संघ ने भली प्रकार देखा, किन्तु उनकी दृष्टि संघ पर तनिक भी न पड़ी। इस प्रकार मार्ग में म्लेच्छोपद्रव के भय से संघ मुक्त होकर आचार्य श्री के साथ विहार करता हुआ क्रमशः दिल्ली के समीप पहुँच गया।

आचार्य श्री जिनचन्द्रसूरिजी के दिल्ली पधारने की सूचना पाकर जब सुन्दर वेशभूषा में सुसज्जित होकर नगरवासी एवं सौभाग्यवती स्त्रियाँ मंगलगान गाती हुई आचार्य जी के दर्शनार्थ जाने लगीं तो उन्हें जाते देखकर राजप्रासाद में बैठे हुए महाराज मदनपाल ने अपने अधिकारियों से पूछा कि नगर के ये विशिष्ट जन कहां जा रहे हैं? उन्होंने कहा—"राजन्! ये लोग अपने गुरुदेव के स्वागतार्थ जा रहे हैं। आज उनका हमारे नगर के निकट ही पदार्पण हुआ है। गुरुदेव अल्पवयस्क होते हुए भी धर्म के प्रकाण्ड वेत्ता, प्रभावशाली तथा सुन्दर आकृति वाले हैं।" यह सुनकर महाराज के मन में भी गुरुदेव के दर्शन की उत्कण्ठा उत्पन्न हुई एवं वे सदलबल श्रावक-श्राविकाओं से पूर्व ही आचार्य देव के दर्शनार्थ पहुंच गये और नगर में पधारने की विनति की।

आचार्यश्री अपने गुरुदेव युगप्रधान श्री जिनदत्तसूरिजी के दिये हुये उपदेश को स्मरण करते हुए दिल्ली नगर में प्रवेश न करने की दृष्टि से मौन रहे। उन्हें मौन देख कर पुनः महाराज ने विशेष अनुरोध किया तो अन्त में आपने नगर में पदार्पण कर महाराज मदनपाल की मनोकामना पूरी की। यद्यपि आचार्यश्री को अपने गुरुदेव की दिल्ली न जाने की आज्ञा का उलंघन करते हुए मानसिक पीड़ा का अनुभव हो रहा था, तथापि भवितव्यता के कारण आपको दिल्ली नगर में पदार्पण करना ही पड़ा। वहां कुछ समय तक आपने अपने उपदेशों से भव्य जीवों का कल्याण करते हुए आयुशेष निकट जान कर सं० १२२३ भाद्रपद कृष्ण चतुर्दशी को चतुर्विध संघ से क्षमायाचना की एवं अनशन आराधना के पश्चात् आप स्वर्ग सिधार गये।

अन्तिम समय में आपने श्रावकों के समक्ष यह भविष्यवाणी की कि— "नगर से जितनी दूर मेरा संस्कार किया जावेगा, नगर की बसावट वसती उतनी ही दूर तक बढ़ती जायगी।"

इस सम्बन्ध में यह भी कहा जाता है कि आचार्य श्री ने अपने स्वर्गवास के पूर्व ही संघ को बुलाकर यह आदेश दिया था कि "मेरे विमान (रथी) को मध्य में कहीं विश्राम मत देना एवं सीधे नगर से बाहर उसी स्थान पर ले जाकर विश्राम देना, जहाँ दाहसंस्कार करना है।" शोकाकुल संघने इस आदेश को भूलकर मध्य में ही पूर्व प्रथानुसार विश्राम दे दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि तनिक विश्राम देने के पश्चात् जब विमान को उठाने लगे तो लाख प्रयत्न करने पर भी वह उस स्थान से लेशमात्र भी नहीं सरका। राजा मदनपाल को जब यह सूचना मिली तो उन्होंने हाथी के द्वारा विमान को उठवाने की व्यवस्था करवाई; किन्तु उसमें भी सफलता नहीं मिली।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्त में गुरुदेव का ही चमत्कार समझ कर महाराजा ने उसी स्थान पर अग्निसंस्कार करने का राजकीय आदेश प्रदान किया।

इसके पश्चात् इस प्रकार की चमत्कारपूर्ण घटना के कारण गुरुदेव का अग्निसंस्कार उसी स्थान पर किया गया।

मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरिजी ने इस प्रकार अपना मंगलमय ऐहिक जीवनयापन कर अपने समय में जिनशासन की उन्नति के साथ-साथ कई अलौकिक कार्य किये।

'वशेषत: अपने चैत्यवासी पद्मचन्द्राचार्य जैसे वयोवृद्ध एवं ज्ञानवृद्ध आचार्य को शास्त्रार्थ में परास्त कर तथा दिल्लीश्वर महाराजा मदनपाल को चमत्कृत करते हुए जो अभूतपूर्व कार्य किये निस्सन्देह वे आपकी उत्कृष्ट साधना के परिचायक ही हैं। इसके अतिरिक्त आपने महत्तियाण (मन्त्रिदलीय) जाति की स्थापना कर महान् उपकार किया। आपके द्वारा संस्थापित इस जाति की परम्परा के कई व्यक्तियों ने पूर्वदेश के तीर्थों का उद्धार कर शासन की महान् सेवायें की।

आचार्यदेव श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के ललाट में मणि थी, जिसके कारण ही 'मणिधारीजी' के नाम से आपकी प्रसिद्धि हुई। इस मणि के विषय में पट्टावली में यह उल्लेख मिलता है कि आपने अपने अन्त समय में श्रावकों से कह दिया था कि अग्निसंस्कार के समय मेरे शरीर के निकट दूध का पात्र रखना जिससे वह मणि निकल कर उसमें आ जायगी; किन्तु गुरुवियोग की व्याकुलता से श्रावकगण ऐसा करना भूल गए एवं भवितव्यतावश वह मणि किसी अन्य योगी के हाथ लग गई। कहा जाता है कि श्री जिनपतिसूरिजी ने उस योगी की स्तम्भित प्रतिमा प्रतिष्ठित कर उससे वह मणि प्राप्त कर ली थी।

वस्तुत: मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरिजी महान् प्रतिभाशाली एवं चमत्कारी आचार्य थे, इसमें संदेह नहीं। केवल ६ वर्ष की अवस्था में दीक्षा ग्रहण कर ८ वर्ष की अल्पायु में आचार्यपद प्राप्त कर लेना कम विस्मयकारक नहीं है। ऐसे युगप्रधान मणिधारी श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के प्रति हृदय से जितनी भी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की जाय, थोड़ी है।
[श्रीजिनदत्तसूरि सेवासंघ प्रकाशित दादागुरु चरित्र से]

[मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरिजी के महान् व्यक्तित्व का ज्ञान यु० प्र० श्री जिनदत्तसूरिजी को उनके माता के गर्भ में आने से पूर्व ही हो गया था। युगप्रधानाचार्य गुर्वावली में जिनपालोपाध्याय ने लिखा है—"स्वज्ञानबल दृष्ट निज पट्टोद्धारकारि रासलाङ्गरुहाणां भास्करवद्विबोधित भुवन मण्डल भव्याम्भोरुहाणां" इस संकेतात्मक रहस्य का उद्घाटन करते हुए सतरहवी शताब्दी की गुर्वावली में यह उल्लेख किया है कि एक बार सेठ रामदेव ने श्री जिनदत्तसूरिजी से पूछा कि आपकी वृद्धावस्था आ गई, आपके पट्ट योग्य शिष्य कौन है ? सूरिजी ने कहा— अभी तो वैसा कोई दिखाई नहीं देता ! रामदेव ने पूछा—अभी नहीं है तो क्या कोई स्वर्ग से आवेंगे ? पूज्यश्री ने कहा—ऐसा ही होगा ! रामदेव ने कहा—कैसे?आपने कहा—अमुक दिन देवलोक से च्यव कर विक्रमपुर के श्रेष्ठी रासल की लघु धर्मपत्नी की कुक्षि में मेरे पट्टयोग्य जीव अवतीर्ण होगा। यह सुनकर कुछ दिन बाद रामदेव सांढ़ पर चढ़ कर विक्रमपुर रासल श्रेष्ठीके घर पहुँचे। सेठ ने कुशलवार्त्तापूछने के पश्चात् आगमन का कारण पूछा। रामदेव ने कहा—आपकी लघुभार्या को बुलाइये ! उसके आने पर रामदेव ने पट्ट पर बैठाकर देल्हणदेवी के कण्ठ में हार पहनाते हुए नमस्कार किया। रासल श्रेष्ठी के इसका कारण पूछने पर रामदेव ने जिनदत्तसूरि द्वारा ज्ञात, इनकी कुक्षिमें उनके पट्टयोग्य पुण्यवान् जीव के अवतीर्ण होने का हर्ष संवाद कह सुनाया। इस प्रकार श्री जिनदत्तसूरिजी ने इनकी विशिष्ट योग्यता गर्भ में आने से पूर्व ही अपने ज्ञानबल से जान ली थी।

आपकी जीवनी के सम्बन्ध में हमारी "मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि" पुस्तक द्वितीयावृत्ति विशेष रूप से द्रष्टव्य है उसमें आपकी रचनाएं 'व्यवस्थाशिक्षाकुलक" व स्तोत्रादि भी प्रकाशित हैं। —सम्पादक]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org